पापी के मारने को पाप महां बली है

104

धरती में अनेक प्रकार के **तत्व** (elements) हैं। इन तत्वों के आपसी संयोग से कई अन्य मिश्रित तत्व (complex elements) बनते रहते हैं। इस प्रकार अनेक प्रकार के मिश्रित तत्वों की परस्पर प्रतिक्रिया द्वारा, अग्नि पैदा होती है। इन समस्त तत्वों की सुलगाई हुई '**अग्नि**' बढ़ती हुई **धधकती हुई** बहुत बड़ा **अग्नि कुण्ड** बन जाती है। जो भी वस्तु इस की लपेट में आ जाये, उसे भी **ढालकर अग्नि रूप 'लावा'** ही बना देती है। जब भी इन लपटों में कोई नया तत्व आ कर मिलता है, तो इस में से धमाका निकलता है तथा पृथ्वी हिलती है, जिसे 'भुचाल' कहते हैं। यह अत्यन्त विशाल आग की '**भट्ठी**' जब अपने आप में नहीं समा पाती तब धरती से बाहर उबल कर, उछल आती है, तब इसे 'ज्वाला मुखी का फटना' (eruption of volcano) कहते हैं। इस प्रकार के ज्वालामुखी के धमाके तथा उबाल होते रहते हैं, जिससे अत्यन्त विनाश होता है। यह धरती के भीतर अग्नि का कुण्ड बहुत दीर्घकाल तक अन्दर ही **सुलगता तथा भभकता** रहता है तथा अन्त में धरती से बाहर फुट कर अत्याधिक विनाश का कारण बनता है।

इसी प्रकार पृथ्वी के ऊपर भी कई तत्व कार्य करते हैं, इन तत्वों की प्रतिक्रिया स्वरूप अनेक विरोधी तत्व (cross-currents) उत्पन्न होते हैं, जिससे कई प्रकार के प्राकृतिक संकट (calamity) आते हैं, जैसे — आँधी, तूफान, बाढ़, ओले आदि। ये भी अत्यन्त विनाश का कारण बनते हैं।

आकाश में भी कई प्रकार के तत्वों के किसी विशेष डिग्री पर मिलाप स्वरूप अत्यन्त शक्तिशाली विद्युत उत्पन्न हो कर गर्जती है, तथा क्षण भर में अपना चमत्कार दिखा कर अलोप हो जाती है।

"**जो ब्रहमंडे सोई पिंडे** जो खोजै सो पावै" (पृ. ६९५) के गुरूवचन अनुसार जिस प्रकार बाहर प्राकृतिक कौतुक या **कोप दिखते हैं**, उसी प्रकार हमारे भीतर '**मन की दुनिया**' में सदा ही मानसिक **कोलाहल** अथवा खिचड़ी पकती रहती है। **बाहरी**

संकटों का कारण तो प्राकृतिक **तत्वों का मेल** होता है, परन्तु हमारी मानसिक दुनिया की खिचड़ी या **कोलाहल** का कारण **हमारे अपने तुच्छ विचार ही हैं।**

हमारे मन में तीन प्रकार के ख्याल उत्पन्न होते हैं —

1. दैवीय या उत्तम भक्ति वाले ख्याल
2. निष्पक्ष ख्याल
3. तुच्छ ग्लानिपूर्ण ख्याल

इन ख्यालों के उत्पन्न होने के कई कारण हैं, जैसे —

साध संगत करते हुए **उत्तम ख्याल** उत्पन्न होते हैं। कुसंगत करते हुए तुच्छ ख्याल उत्पन्न होते हैं। पूर्व संस्कारों का **प्रभाव** भी हमारे ख्यालों पर पड़ता है।

पूर्व संस्कार तो हमारे वश में नहीं हैं। परन्तु ज्यों-ज्यों हम सत्संगत करते जायेंगे, शुभ उत्तम भावना वाले ख्यालों की बहुलता से धीरे-धीरे हमारे संस्कार भी **बदल** सकते हैं।

यह बात दृढ़ करने योग्य है कि हमारे मन के **ख्याल या भावना** ही मूल कारण या बीज हैं, जो हमारे जीवन को —

सुखदायी	या	दुखदायी
सफल	या	निष्फल
नेक	या	बुरा
परमार्थिक	या	मायिकी
शान्त	या	अशान्त
प्रेमपूर्ण	या	शुष्क
स्वर्ग	या	नरक
निर्मल	या	मलिन
आस्तिक	या	नास्तिक
गुरमुख	या	मनमुख

बनाने में समर्थ है। इसी लिए गुरबाणी में हमें **कुसंगत से बचने का** ताकीदी हुकुम है —

ते साकत चोर जिना नामु विसारिआ
मन तिन कै निकटि न भिटीऐ ।। (पृ १७०)

दूजै भाइ दुसटा का वासा ॥
भउदे फिरहि बहु मोह पिआसा ॥
कुसंगति बहहि सदा दुखु पावहि दुखो दुखु कमाइआ ॥ (पृ. १०६८)

नानक कचड़िआ सिउ तोड़ि ढूढि सजण संत पकिआ ॥ (पृ. ११०२)

कबीर मारी मरउ कुसंग की केले निकटि जु बेरि ॥
उह झूलै उह चीरीऐ साकत संगु न हेरि ॥ (पृ.१३६९)

कबीर साकत संगु न कीजीऐ दूरहि जाईऐ भागि ॥
बासनु कारो परसीऐ तउ कछु लागै दागु ॥ (पृ. १३७१)

दूसरी ओर **उत्तम दैवीय संगत करने की ताकीदी** प्रेरणा की गयी है —

साधू संगु करहु सभु कोइ ॥
सदा कलिआण फिरि दूखु न होइ ॥ (पृ. १९६)

जीति जनमु इहु रतनु अमोलकु साध संगति जपि इक खिना ॥ (पृ. २१०)

महा पवित्र साध का संगु ॥
जिसु भेटत लागै प्रभ रंगु ॥ (पृ. ३९३)

नानक पतित पवित मिलि संगति गुर सतिगुर पाछै छुकटी ॥ (पृ. ५२८)

साधसंगि मिलि नामु धिआवहु पूरन होवै घाला ॥ (पृ. ६१७)

साध-संगत करते हुए न केवल पूर्व संस्कार ही बदल सकते हैं, अपितु **तुच्छ ख्यालों की रुची** भी धीरे-धीरे मिट सकती है। सत्संगत में उत्तम दैवीय गुणों को ग्रहण करते हुए, सुन्दर भावनाओं वाले आकाश में उड़ान भरते हुए, **'प्रीत-प्रेम-रस-चाव'** के उच्च-पवित्र आत्मिक मंडल में प्रवेश करते हैं, जहाँ तुच्छ वृतियों या मलिन ख्यालों के लिए कोई स्थान नहीं है। परन्तु यह **खेल कठिन है** तथा इस को किसी विरले ने ही जाना, कमाया तथा आनन्द उठाया है ।

दुनिया में जो कुछ उत्पन्न हुआ है, सब पहले **सूक्ष्म देश** में से उत्पन्न होता है तथा **फिर स्थूल रूप धारण करता है**। सूक्ष्म अकाल पुरुष में से सूक्ष्म **'कवाओ'** या **'हुकुम'** उत्पन्न हुआ, तब समस्त स्थूल सृष्टि प्रकट हुई ।

इसी प्रकार पहले हमारे ख्याल में कोई संकल्प उठता है, फिर वह हमारे कर्मों द्वारा रूपमान हो कर हमारे सम्मुख दृष्टमान हो जाता है, उदाहरण के रूप में, घर

बनाने से पहले उस का नक्शा हमारे ख्याल अथवा दिमाग में आता है, फिर वह धीरे-धीरे रूपमान हो जाता है।

इसलिए हमारे ख्याल, संकल्प-विकल्प बहुत **शक्तिशाली** हैं। इन ख्यालों के पीछे हमारे **मनोभावों की तीक्ष्णता** (intensity) अनुसार इसकी शक्ति घटती-बढ़ती रहती है।

हमारा मन बाहर से आस-पास के वातावरण (environment) की संगत का तथा भीतर से हमारी तुच्छ वाशनाओं —

शक
जलन
ईर्ष्या
द्वेष
नफरत
निंदा
झूठ
बेईमानी
स्वार्थ
गुट्टबन्दी
वैर
विरोध
टकराव
लड़ाईयाँ
बदला
काम
क्रोध
लोभ
मोह
अहंकार

की कुसंगति तथा गहरे संस्कारों का भी प्रभाव लेता रहता है, जिससे हमारे ख्यालों पर

इनके प्रभाव की **'रंगत'** चढ़ती रहती है। यह रंगत अच्छी-सुखदायी या बुरी-दुखदायी हो सकती है।

हमारे मन में ऐसे तीक्ष्ण भावनाओं वाले ख्याल उत्पन्न होते रहते हैं, उन की **शक्तिशाली किरणों** (powerful rays) का गहरा प्रभाव हमारे शरीर, मन, बुद्धि पर पड़ता है तथा हमारा आचरण बनता **और बदलता रहता है**। इन ख्यालों तथा भावनाओं की शक्तिशाली किरणें दिन-रात सदा ही हमारे अन्दर से निकल कर दूसरी रूहों तथा हमारे आस-पास के वातावरण पर भी **प्रभाव डालती रहती हैं**। इसी मानसिक रंगत की प्रेरणा द्वारा हम कर्म करते हैं तथा इन्हीं कर्मों अनुसार क्षण प्रतिक्षण, हम अपना भाग्य या किस्मत बनाते रहते हैं।

दिनु राति कमाइअड़ो सो आइओ माथै ।। (पृ. ४६१)

इस के अतिरिक्त हमारी गहरी तीक्ष्ण भावनाओं की किरणों का प्रभाव हमारे आस-पास के वायुमंडल द्वारा प्रत्येक सूक्ष्म तत्व तथा स्थूल वस्तुओं पर भी पड़ता है, इस प्रकार इन किरणों का प्रभाव हमारे —

साथियों

परिवारों

पड़ोसियों

समाज, तथा

देश

पर पड़ रहा है। यहाँ ही बस नहीं प्रकृति के तत्वों तथा समस्त ब्रह्मांड पर भी हमारे अच्छे या बुरे तीक्ष्ण भावों की लहरों का प्रभाव पड़ता है।

सृष्टि के वातावरण में अत्यन्त **सूक्ष्म-तत्** (ether) विद्यमान है। हमारे ख्यालों की सूक्ष्म तथा तीक्ष्ण किरणें (vibrations) सारे **ब्रह्मांड** (ether) में फैल जाती है तथा वहां के 'वातावरण' अथवा **समस्त जगत् मन के कम्प्यूटर** (computer) **में संभाल कर** (record) **रखी जाती है**। ये ख्याल भिन्न-भिन्न स्तर के होते हैं तथा उन विशेष स्तरों पर ही दर्ज होकर एकत्रित होते रहते हैं। इस प्रकार ये भाँति-भाँति के अत्यन्त सूक्ष्म ख्यालों का **सामूहिक प्रभाव** (cumulative effect) 'रंगत' या 'भड़ास' धीरे-धीरे चुप चाप गुप्त ही वायु मंडल पर पड़ रहा है तथा उसे **'गंदा' कर रहा है**।

दूसरे शब्दों में **समस्त जनता** के ख्यालों का अच्छा-बुरा 'प्रभाव' वातावरण के सूक्ष्म कम्प्यूटर में अलग-अलग स्तर पर प्रति क्षण, प्रति पल एकत्रित होता रहता है तथा **शक्तिमान बन कर सम्पूर्ण 'सांसारिक वातावरण' द्वारा, उन्हीं के स्तर के मनों पर अच्छा या बुरा प्रभाव डालता है।**

इस का तात्पर्य यह हुआ कि हमारे छोटे से छोटे ख्यालों का अच्छा या बुरा प्रभाव पहले **हमारे मन पर पड़ता है।**

जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना ।। (पृ. ४३३)

फिर वायुमंडल के सूक्ष्म वातावरण को **बदलता तथा दूषित करता है।**

'वायु मंडल' के वातावरण में उस प्रकार के खास ख्यालों से मिलकर **शक्तिशाली** बनता है।

वही अच्छे-बुरे शक्तिशाली ख्याल पुनः हमारे मन पर **जोरदार प्रभाव डालते हैं।**

इस प्रकार हम अपने ही ख्यालों के **जहरीले भँवर** (vicious circle) **में फँसे हुए हैं**, जिस में से अपने आप निकलना कठिन है।

इस प्रकार सभी के मन के ख्यालों तथा कर्मों का प्रभाव समस्त **जनता पर पड़ता है** तथा जनता के ख्यालों का प्रभाव, **सृष्टि के वातावरण द्वारा पलट कर हम सब पर सामूहिक रूप में पड़ता है** । (boomerang)

इसलिए हम अपने चारों ओर के वातावरण को **अच्छा या बुरा बनाने के स्वयं जिम्मेदार हैं** तथा उसकी अच्छी-बुरी 'भड़ास' (ecology) के भागीदार होते हैं ।

सतयुग में उच्च-पवित्र दैवीय गुणों वाले सुन्दर ख्यालों तथा मनोभावों की **बहुलता** थी तथा ब्रह्मांड में —

दया

धर्म

सत्

संतोष

धैर्य

क्षमा

नम्रता

आनन्द

सुख

शान्ति

मैत्री-भाव

सेवा-भाव

स्वयं को न्यौछावर करना

प्रेम

चाव

आदि, दैवीय गुणों का व्यवहार था।

इस के विपरीत वर्तमान समय में घोर कलयुग का बोलबाला है। समस्त सृष्टि का वातावरण भी अत्यन्त मलिन तथा खतरनाक हो गया है। यह घोर कलयुग का वातावरण, हमारे ही मलिन ख्यालों का, तीक्ष्णता तथा तीव्रता द्वारा किये लगातार अभ्यास का ही सामूहिक परिणाम है।

दूसरे शब्दों में वर्तमान समय में **तुच्छ विचारों की बहुलता तथा राज्य है**, जिस का नक्शा गुरबाणी में यूँ खींचा गया है —

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ ॥
कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ ॥ (पृ. १४५)

कलि कालख अंधिआरीआ ॥ (पृ. २१०)

कलजुगि रथु अगनि का कूड़ु अगै रथवाहु ॥ (पृ. ४७०)

बाबा देखै धिआन धरि जलती सभि पृथिवी दिसि आई।
बाझहु गुरू गुबार है है है करदी सुणी लुकाई। (वा.भा.गु. १/२४)

इन उपरोक्त विचारों से तीन तथ्य स्पष्ट हो कर उभरते हैं —

जिस प्रकार पृथ्वी के अन्दर कई प्रकार के तत्वों के **मेल तथा प्रतिक्रिया स्वरूप लपटें** जल रहीं **है**, इसी प्रकार हमारे मन के भीतर —

ईर्ष्या

द्वेष

जलन

कुढ़न

काम

क्रोध

लोभ

मोह

अहंकार

आदि, कई प्रकार की **वाशनाओं की अग्नि की लपटें जल रही हैं**, जिन को गुरबाणी में, **"गूझी भाहि जलै संसारा"** (पृ. ६७३) कहा गया है। इस गुप्त अग्नि ने सारे संसार को लपेटा हुआ है तथा समस्त संसार ही '**आतिश दुनिया**' अथवा एक बड़ा अग्नि कुण्ड बना हुआ है। तुच्छ मायिकी वृत्तियों की बहुलता होने के कारण हमारे जीवन में उच्च पवित्र भावनाओं की कद्र-कीमत कम हो गयी है तथा हम इस गुप्त मायिकी अग्नि में दिन-रात पलच-पलच कर अशांत तथा दुखी हो रहे हैं।

जीअड़ा अगनि बराबरि तपै भीतरि वगै काती ।। (पृ. १५६)

जगतु जलंदा डिठु मै हउमै दूजै भाइ ।। (पृ.६५१)

पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ।। (पृ. १३३)

पापी का घरु अगने माहि ।।
जलत रहै मिटवै कब नाहि ।। (पृ. ११६५)

अंतरि क्रोधु अहंकारु है अनदिनु जलै सदा दुखु पाइ।। (पृ. १४१५)

आज से लगभग 500 वर्ष पूर्व गुरू साहिबान ने ऊपर अंकित शब्दों द्वारा जो कलयुग का नक्शा खींचा था, आज कल हमारी दुर्दशा, उस से भी बुरी तथा बदतर होती जा रही है। हमारे तुच्छ तथा असुरी ख्याल तथा रुचियाँ इतनी ग्लानि पूर्ण हो गई हैं कि उच्च-पवित्र दैवीय गुणों का ख्याल हम में **उत्पन्न ही नहीं होता**। यदि कोई विरला भद्र पुरुष उच्च दैवीय गुणों का प्रकटाव करता है, तब तुच्छ रुचियों की बहुलता विरोध करती है तथा उस का जीवन '**दूभर**' कर देती है। यह कहना गलत नहीं होगा, कि वर्तमान कलयुगी संसार में भले पुरुष तथा गुरमुख जनों के लिए जीवन व्यतीत करना कठिन तथा दुखदायी हो गया है, क्योंकि हर तरफ —

ईर्ष्या

द्वेष

नफरत

जल्न

शक

अशान्ति

अ-विश्वास

खींच तान

स्वार्थ

धोखा

बेईमानी

मिलावट

भृष्टाचार

धक्केशाही

छीना-झपटी

लूट-पाट

ठग्गी

रिश्वत खोरी

वैर-विरोध

लड़ाईयाँ

झगड़े

अत्याचार

का बाजार गर्म है, जिस की साक्षी हमारी अदालतें हैं। यह **'मायिकी गुप्त अग्नि'** हमारे अन्तःकरण, मन, बुद्धि तथा हृदय में से निकल कर हमारे तन मन को जलाती हुई हमारे —

परिवारों

पड़ोसियों

मुहल्ले

गांवों

शहरों

देशों

तथा समस्त संसार को अपनी लपटों की चपेट में ले लेती हैं। इन की तीव्र **'जहरीली**

किरणों' (intense vicious rays) का, समस्त ब्रह्मांड पर भी जबरदस्त प्रभाव पड़ रहा है जिसका परिणाम हमारे विश्व युद्ध तथा सब देशों में बेचैनी, झगड़े, शत्रुता, अत्याचार तथा लड़ाईयाँ हैं। यहाँ पर यह स्पष्ट है कि समस्त संसार के 'कोलाहल' तथा 'उत्पात' का मूल कारण हमारे **अपने-अपने तुच्छ तथा जहरीले ख्याल ही हैं, तथा इन जहरीले ख्यालों का ही सर्वत्र प्रसार तथा व्यवहार है।**

इन ग्लानि पूर्ण ख्यालों का सूक्ष्म **जहरीला प्रभाव** सांसारिक वायुमंडल में, इतना गहरा प्रवेश कर चुका है, कि समस्त **सृष्टि ही बदल रही है।** इसी कारण—

नवीन सभ्यता
आधुनिकता
विद्वता
फिलोसफी
वैज्ञानिक उन्नति
सुख
ऐश्वर्य
मनोरंजन
रस-भोग

तथा अन्य नये-नये साधनों के होते हुए भी, **हम पहले से अधिक निर्बल, बीमार, अशांत तथा दुखी हो रहे हैं।**

दूसरी बात यह है कि हमारी दुर्दशा का मूल कारण हमारी **अज्ञानता या भ्रम का अंधकार है,** जिस कारण हम गलत, तुच्छ तथा जहरीले ख्याल या संकल्प (vicious thoughts) सोचते हैं, तथा गलत काम करते हुए अपना जीवन **दुष्वार** तथा दुखदायी बना रहे हैं ।

जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना ।। (पृ. ४३३)
जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ।। (पृ.१३४)

दूसरे शब्दों में अपने जहरीले ख्यालों द्वारा हम **अपने आप ही अपने लिए** दुखदायी जीवन बना रहे हैं। इसी प्रकार **हम स्वयं ही अपना तथा सामूहिक रूप से सृष्टि की तबाही का कारण बन रहे हैं।** सच बात यह है कि हमारे —

तुच्छ ख्याल
तुच्छ रुचियाँ

मलिन कर्म
वाशनाँए
अथवा **'पाप' ही हमारे समक्ष आ कर, हमें सजा देते हैं।**

"पापी के मारने को पाप महां बली है।"

यह ईश्वरीय अटल नियम है।

तीसरी बात यह है कि हमारे **व्यक्तिगत** गलत जहरीले ख्यालों की तीव्र किरणें बढ़ती-बढ़ती अत्यन्त तीक्ष्ण होकर **वायु मंडल के सूक्ष्म कम्प्यूटर** में इकट्ठी होती रहती है तथा निर्मल प्रकृति तथा सृष्टि को भी गंदा तथा जहरीला बना रही हैं, जिस कारण प्रकृति की रग-रग, ताने-बाने में ग्लानि परिपूर्ण (saturate) हो गयी है। जैसे पृथ्वी के अंदर आग की लपटें जलते-जलते, सुलगते-सुलगते जब समा नहीं पाती, तब बाहर फूट कर विनाश करती हैं, वैसे ही हमारे अन्दरूनी पापों की **'गुप्त ज्वाला'** बढ़ कर, सुलगकर गर्जती तथा भभकती रहती है जो कहीं-कहीं लड़ाई-झगड़े के रूप में प्रकट होती रहती है। किसी समय भी हमारा यह आन्तरिक **'अग्नि रूप लावा'** उछल कर तथा भीतरी ज्वालामुखी फटकर **समस्त संसार को अपनी लपेट में ले कर, संसार के विनाश अथवा प्रलय का कारण बन सकता है।**

यद्यपि इस **ग्लानि** के विषय में हम शिकायतें तथा टीका-टिप्पणी तो करते रहते हैं, परन्तु स्वयं अपनी **पुरानी ग्लानिपूर्ण 'जीवन-प्रणाली' को छोड़ नहीं सकते।**

हम जीवन के प्रत्येक मोड़ पर इस ग्लानि का ही **सहारा या मार्ग दर्शन** लेते हैं तथा अपने उचित-अनुचित स्वार्थों की पूर्ति के लिए, **तुच्छ साधनों का प्रयोग करने का भी संकोच नहीं करते।**

इस ग्लानि के जहरीले मानसिक 'रोग' बढ़ कर इतने शक्तिशाली हो गये हैं, कि 'तपैदिक रोग' की भाँति, हमारे तन,मन, बुद्धि, अन्तःकरण में धँस-बस-समा गये हैं तथा नित्यप्रति और अधिक **खतरनाक तथा 'घातक' बन रहे हैं।**

जब हमारे ख्यालों का **प्रभाव इतना गहरा तथा खतरनाक हो सकता** है, तब हमें अपने ख्यालों पर **पहरा देना अति आवश्यक है**, परन्तु हम अपने-अपने ख्यालों तथा कर्मों के परिणाम से बेपरवाह तथा **लापरवाह हो कर** पुरानी आदतों

अनुसार ही जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इस प्रकार हम 'मानसिक तपैदिक' के रोग को और **दीर्घ तथा खतरनाक बना रहे हैं।**

हम घरों, गलियों, मुहल्लों, शहरों तथा चारों ओर के दूषित वायुमंडल के विषय में तो बहुत **वाद-विवाद** करते हैं तथा **हाल-दुहाई** देते हैं, **परन्तु अपनी भीतरी मानसिक ग्लानि के भयानक परिणाम से अनजान, बे-खबर, बे-परवाह तथा ला-परवाह हो रहे हैं।**

समझने योग्य महत्वपूर्ण बात यह है कि **शारीरिक रोग तो मौत के साथ ही समाप्त हो जाते हैं,** परन्तु अन्तःकरण में स्वयं लगाए **मानसिक रोग तो अगले जन्मों में भी, जीव के साथ चिपके रहते हैं।**

संसार में पहले ही **ग्लानि भरपूर हो कर छलक रही है।** यदि इस मानसिक ग्लानि के ज़हर को **हम कम नहीं कर सकते, तो बढ़ाने का भी हमें कोई अधिकार नहीं।**

सारे विश्व में जो अशान्ति, स्वार्थ, अहंकार, ईर्ष्या-द्वेष, वैर-विरोध, घृणा, लड़ाई-झगड़े, अत्याचार, जुल्म का बोल बाला है, इन सब का मूल कारण या 'बीज' हमारे ही अपने **ख्याल तथा संस्कार** हैं, जिस का सामूहिक प्रभाव या 'रंगत' दुनिया के **जीवन के प्रत्येक अंग में प्रत्यक्ष है।**

ईश्वर ने अपने अंश इन्सान के लिए स्वर्ग रूप सृष्टि रची थी तथा हर प्रकार के सुख-आराम प्रदान किये थे, परन्तु हम ने अपने तुच्छ ख्याल, तुच्छ रुचियों की गुप्त अग्नि द्वारा इस **स्वर्ग-रूप सृष्टि को नरक-रूप सृष्टि** बना दिया है।

इस प्रकार हम ने **अपने पैरों पर आप कुल्हाड़ी मारी है** तथा आप ही नरक भोगते हुए दुखी हो रहे हैं तथा अन्य लोगों को भी दुखी कर रहे हैं।

कबीर दीनु गवाइआ दुनी सिउ दुनी न चाली साथि ॥
पाइ कुहाड़ा मारिआ गाफलि अपुनै हाथि ॥ (पृ. १३६५)

किसी महापुरुष ने हमारी इस आन्तरिक **गुप्त अग्नि** के विषय में बहुत सुन्दर तथा संक्षिप्त शब्दों में यूँ वर्णन किया है —

"संसार दहक रहा है, आग के शोले उठ रहे हैं। जिन्हें ईश्वर ने पदार्थिक सुख प्रदान किये हैं, वे ईर्ष्या, द्वेष, गिनती, हिसाब, शंका आदि आन्तरिक ज्वाला में जल रहे हैं। बे-यकीनी, अविश्वास का **भूत** आत्मा को चिपका हुआ है, जड़ें धरती से

उरवड़ कर, बाहर निकलकर सूरव गई हैं तथा ज्वलन् पदार्थ (ईंधन) बन चुकी है। रेशम तन पर रवड़रवड़ाहट करते हैं, परन्तु यह रवड़रवड़ाहट सूरवे पत्तों की है, तथा जो 'अन्न' 'वस्त्र' के अभाव से दुरवी हैं, उन्हें भूरव, प्यास, नंगापन, दरिद्रता, रोग, कष्ट आदि सता रहे हैं। गरीबी की मार ने कमर तोड़ दी है, मन टूटे हुए हैं। संसार तपा हुआ, शरीर गर्म, जीवन गर्म, जीवन क्षेत्र गर्म, बाहरमुरवी वृत्तियाँ गर्म, काम गर्म आग, क्रोध गर्म आग, भूरव गर्म आग, अमीरी केवल अग्नि-कुण्ड, मन तपा, चित्त तपा, मनमुरव टूटे हुए, सूरवे हुए जीवों का 'प्यार' तपा। हाय ! चारों ओर आग ही आग, अंदर भी आग, बाहर भी आग, **दीन भी आग, दुनी भी आग,** इस आग में बैठा प्रभु का प्यारा प्रहलाद ! मन ठंडा, चित्त ठंडा, जीभ ठंडी, दिल ठंडा, तृष्णा रहित दिल हरा-भरा, जड़ें प्रभु की याद में गढ़ी हुई, सहज-स्वाभाविक गढ़ी हुई, अचेत ही गढ़ी हुई, सुरति एकाग्र, रोम-रोम से अमृत धारा बह रही है, अग्नि प्रणाम कर रही है। प्रभु का भक्त बैठा है, बस **केवल प्रभु का प्यारा ठंडा है**। प्रभु का नाम 'रवुनक' है, **'रवुनक नामु रवुदाइआ', उससे स्पर्श प्राप्त करके मनुष्य ठंड महसूस करता है सच्चा सुरव** प्राप्त करता है, आत्मा शीतल हो जाती है। चित्त भटकन छोड़, शांत हो जाता है, प्रभु की कृपा बचाती है।

ताती वाउ न लगई पारब्रहम सरणाई ॥ (पृ. ८१९)

मानवता इस शीतलता को ढूँढ रही है, तभी तो मनुष्य को साकार रूप दे कर भेज रही है। माँ जब बिछुड़े बच्चे को मिलती है, या गले लगाती है, तब उस क्षण भर के लिए, इस अमृत शीतलता की झलक दिरवती है। जब इन्सान की इच्छा, तीव्र इच्छा — काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के वश आई फलती है, तब फलीभूत होने पर, उस क्षण के लिए इसी शीतलता की झलक मिलती है। भूरवे को जब रोटी का टुकड़ा नसीब होता है, तो उसके नेत्रों में एक सुरव झलकता है, वह इसी सुरव का प्रतिबिम्ब है। प्यासे को जब जल की प्राप्ति होती है, तो इसी अवस्था की बिजली कौंध जाती है। दीन और दुनिया इस 'आत्मिक शीतलता' को रवोज रहे हैं, इस **'नाम-रवुनकी'** की अमर, अमिट, अटल लालसा में हैं। यह लालसा सृष्टि की बनावट में है, मिट नहीं सकती। शीतलता कैसे मिले ? काम, क्रोध, अहंकार, जब तक मन, चित्त, बुद्धि, आन्तरिक वृत्ति में बसते हों, इस मनुष्य के शत्रु हैं। आत्मा शान्त हो जाए, चित्त की नन्हीं-नन्हीं, बालों से महीन, किरणों की भाँति पतली सूक्ष्म जड़े,

निरंकार-करतार अकाल पुरुष में किसी प्रकार गढ़ जाए तब यह मानवता के सुन्दर आभूषण हैं, वस्त्र हैं, हथियार हैं, सेवक हैं तथा माणिक हैं। अन्यथा आग की लपटें हैं। मनुष्य के सभी आन्तरिक रंग, दुख की आग, इन पाँचों ने जला रखी है।

सारे संसार के अधिकतर दुख इन्हीं की बनाई खिचड़ी है। इनकी चाकरी में तो वह सुख है ही नहीं, जो शाह बैहलोल जैसे सिमरन वाले साधू के हाथों के 'स्पर्श' में है, वह ठंड पड़ती नहीं, जिसे छाती में रख पर प्रहलाद आग में बैठ सकता था, तथा तपते स्तम्भ में लिपट सकता था। शीतलता में संतोष आता है, आग में कैसा संतोष ? कैसा ईमान ? अतः संसार जलता हुआ, अपनी लगाई आग को बुझाने के लिए धर्म एवं मजहब की ओर दौड़ा, यह वहाँ जाकर भी जलते हैं, **मजहब को भी इन्होनें आग लगा दी**, वह भीतर जो आग लगी थी, जहाँ भी गया, वहाँ और बढ़ गयी, जलन बुझी नहीं, ठंडक पड़ी नहीं, वह ठंडक कहां है? भ्रम भ्राँति, मजहबों के झगड़ों, जंग, गुट्टबन्दियाँ, अहंकार की भावनाओं, 'मन सन्तुष्टियों', मनघड़न्त सिद्धान्तों, मन बहलाव आदि के जाल में तो इतना जहर चढ़ता है कि भंगी-पोस्तियों की भाँति, लोग मज़हब के नियमों और शरीयतों में फंस कर मर जाते हैं। कई बेहोश हो जाते हैं। पता नहीं यूं क्यों संसार जल रहा है। 'आग — दिलों, शहरों, देशों को लगी हुई है, आपाधापी पड़ी हुई है, 'शोर-कूडु, तृष्णा मार रहा है। **यह अपने हाथों लगाई हुई आग है।** इस आग में कोई प्रभु का प्यारा जीव, 'कोटन में कोऊ' ठंडा है, वह आग में बैठा, ठंडा है, आग उसे कुछ नहीं कहती, उसके सिर पर लाल शोलों का ताज बनाती हुई, आग उस पर कुरबान जाती है।

ठंडी सुरति, अंदर अपने आप में इकटठी सुरति एक नुक्ता है, जो हाथ नहीं आता ! एक नुक्ते (भेद) में बात खत्म होती है।

नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख।। (पृ. ४६७)

काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार, इस आन्तरिक केन्द्र की प्राप्ति के लिए हथियार हैं, परन्तु इनकी इच्छाओं के फैलाव ने कितनी आग मचा रखी है।

लोग इस प्रलय, कयामत, दुनिया के अंत के विषय में जानने के लिए, बड़े उतावले हैं तथा पूछताछ करते रहते हैं तथा **भविष्यवाणी** या ज्योतिष द्वारा खोज करते हैं। इन मूर्ख लोगों को यह समझ नहीं आती कि हम इन्सानों ने अपने आप, अपने हृदयों में जहरीले **बीज बोये हैं**, तथा गलत कर्मों द्वारा **पाप करके अपने**

आप ही गुप्त ज्वाला प्रज्वलित की हुई है। हम इस को दिन रात **बढ़ाते, सुलगाते रहते हैं** तथा इस की विषैली किरणें **वायुमंडल** में भर भर कर **अपने तथा समस्त सृष्टि के विनाश का कारण बन रहे हैं।** दूसरे शब्दो, आने वाली **'प्रलय या कयामत' के लिए हम स्वयं उत्तरदायी हैं। 'पापी के मारने को पाप महां बली है'।**

500 वर्ष पुर्व गुरू साहिबान ने कलयुग का भयानक व्यवहार देरव कर हमें यूं ताड़ना की थी —

अब कलू आइओ रे ।। इकु नामु बोवहु बोवहु ।।
अन रूति नाही नाही ।। मतु भरमि भूलहु भूलहु ।। (पृ. ११८५)

इस विषय पर किसी भविष्य वाणी या ज्योतिष की आवश्यकता नहीं।

'जो मै कीआ सो मै पाइआ' के अटल नियम अनुसार हमारे **जहरीले रव्यालों तथा पापों का फल, 'विनाश' निश्चित तथा अटल है।**

हमारी अज्ञानता तथा भ्रम दूर करने के लिए, तथा हमें तुच्छ रव्यालों, कर्मों, पापों से बचने के लिए, आदि से अनेक पीर, पैगम्बर, औलिये, ऋषि मुनि, गुरू-अवतार आये तथा अपने अपने धर्मों की रचना करके, जनता को उत्तम उपदेशों द्वारा उत्तम-पवित्र जीवन का मार्ग दर्शन देते रहे। अज्ञानता के भ्रम में से निकाल कर मायिकी आग से बचने का साधन बताने के लिए तथा उत्तम दैवीय गुण ग्रहण करने के लिए धर्मों की रचना की गयी थी, **परन्तु अब धर्मों को भी** —

ईर्ष्या-द्वेष
वैर-विरोध
नफरत
लड़ाई-झगड़े
लालच
पारवण्ड
अहंकार
राजनीति

की **मायिकी आग लग गयी है**! तब जनता की रक्षा कौन करे ? पानी आग को बुझाता है, परन्तु यदि पानी को ही आग लग जाये, **तब आग कौन बुझाये** ?

बाहरि की अगनि जयों बुझै जल सरिता कै
नाउ मै जउ आग लागै कैसे कै बुझाईऐ।
बाहरि सै भागि ओट लीजीअत कोट गड़
गड़ मै जो लूट लीजै कहो कत जाईऐ।
चौरन कै त्रास जाए सरन नरिंद गहै
मारै महीपति जीउ कैसे कै बचाईऐ
माया डर डरपत हार गुर द्वारे जावै
तहाँ जो बिआपै माया कहां ठहिराईऐ। (क.भा.गु ५४४)

हमारे पापों तथा ग्लानि की अति हो चुकी है, यदि तबाही अथवा प्रलय का ज्वालामुखी अभी नहीं फूटा तो इस का यही कारण है कि विरले गुरमुख जनों, बखशी हुई, नाम-अभ्यास वाली रूहों की अन्तर-आत्मा में से दया, क्षमा, रस, श्रद्धा भाव की प्रार्थनाँए **जबरदस्त आत्मिक किरणें** (Divine Rays) **वायु मंडल** में फैल कर, हमारी लगाई हुई जहरीली अग्नि को **प्रभावहीन** (neutral)कर रही हैं।

गुरबाणी में गुरू साहिबान ने भी सड़ती-जलती दुनिया पर तरस करके यूं प्रार्थना की है —

जगतु जलंदा रखि लै आपणी किरपा धारि ॥
जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि ॥ (पृ. ८५३)

गुरू साहिबान ने इस स्वयं लगाई आग से बचने की हमें बहुत सुन्दर युक्तियां बताई हैं —

मन मेरे गहु हरि नाम का ओला ॥
तुझै न लागै ताता झोला ॥ (पृ. १७९)
एहु जगु जलता देखि कै भजि पए हरि सरणाई राम ॥ (पृ. ५७१)
कलि ताती ठांढा हरि नाउ ॥
सिमरि सिमरि सदा सुख पाउ ॥ (पृ. २८८)
आतस दुनीआ खुनक नामु खुदाइआ ॥ (पृ. १२९१)

जब तक हम गुरू साहिबान के इन तत्-उपदेशों का पालन नहीं करते, सृष्टि का इस **'आन्तरिक जहरीली अग्नि'** तथा इस के लावे से जल कर नष्ट होना **निश्चित एवं अटल है।**

"पापी के मारने को पाप महां बली है।"

समाप्त..........